विषय-सूची

द्विक-निपात (१-५)

१. प्रथम पंचाशतक

१. करणीय वर्ग - - - - - - - - - - - - - - - - ५२
१. दोष सुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५२
२. प्रधानसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५३
३. अनुतापसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५४
४. अननुतापसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५४
५. उपज्ञातसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५४
६. संयोजनसुत्त- - - - - - - - - - - - - - - - ५५
७. कृष्णसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५६
८. शुक्लसुत्त - - - - - - - - - - - - - - - - ५६
९. चर्या (आचरण) सुत्त - - - - - - - - - - - - - - ५६
१०. वर्षोपनायिकासुत्त - - - - - - - - - - - - - - ५६
२. प्रबंध कौशल वर्ग - - - - - - - - - - - - - - ५६
३. मूर्ख वर्ग - - - - - - - - - - - - - - - - ६३
४. समचित्त वर्ग - - - - - - - - - - - - - - - - ६६
५. परिषद वर्ग - - - - - - - - - - - - - - - - ७४

द्विक निपात

१. प्रथम पंचाशतक

१. करणीय वर्ग

१. दोष सुत्त

१. ऐसा मैंने सुना – एक समय भगवान श्रावस्ती में, जेतवन में अनाथपिण्डिक के आराम में विहार कर रहे थे। वहां भगवान ने भिक्षुओं को संबोधित किया –"भिक्षुओ!" उन भिक्षुओं ने भगवान को प्रत्युत्तर दिया – "भदंत!" भगवान ने यह कहा –

"भिक्षुओ, दो दोष हैं। कौन-से दो? इहलोक-संबंधी दोष (इसी जन्म में बुरा फल देने वाला दुष्कर्म) तथा परलोक-संबंधी दोष (परलोक में बुरा फल देने वाला दुष्कर्म)। भिक्षुओ, इहलोक-संबंधी दोष कौन-सा है? भिक्षुओ, एक आदमी देखता है कि एक चोर को, एक अपराधी को राजा के आदमी पकड़ कर ले जाते हैं और नाना प्रकार के दंड देते हैं –कोड़े से भी मारते हैं, बेंत से भी पीटते हैं, मुद्गर से भी पीटते हैं, हाथ भी काट लेते हैं, पांव भी काट लेते हैं, हाथ-पांव भी काट लेते हैं, कान भी छेद देते हैं, नाक भी छेद देते हैं, कान-नाक भी छेद देते हैं, खोपड़ी निकालकर उसमें गर्म लोहा भी डाल देते हैं, बालों सहित सिर की चमड़ी उखाड़ कर खोपड़ी को कंकड़ों से भी रगड़ते हैं, संडासी से मुँह खोलकर उसमें दीपक भी जला देते हैं, सारे शरीर पर तेल-बत्ती लपेटकर उसमें आग भी लगा देते हैं, हाथ पर तेल-बत्ती लपेट कर उसमें आग भी लगा देते हैं, गले से गिट्टे तक की चमड़ी भी उतार देते हैं, गले से कटि-प्रदेश तक की चमड़ी और कटि-प्रदेश से गिट्टे तक की चमड़ी भी उतार देते हैं, दोनों कोहनियों तथा दोनों घुटनों में मेखें (कील) ठोक कर जमीन पर भी लिटा देते हैं, उभय-मुख कांटे गाड़-गाड़कर चमड़ी, मांस तथा नसें भी नोच लेते हैं, सारे शरीर की चमड़ी को कार्षापण-कार्षापणभर काट डालते हैं, शरीर को जहां-तहां शस्त्रों से पीट कर उस पर कंघी भी फेरते हैं, एक करवट लिटा कर कान में से कील भी गाड़ देते हैं, बिना चमड़ी को हानि पहुँचाये अंदर-अंदर हड्डी भी पीस डालते हैं, उबलता-उबलता तेल भी डाल देते हैं, कुत्तों से भी कटवाते हैं, जीते जी सूली पर भी लटकाते हैं तथा तलवार से सिर भी काट डालते हैं।

"उसके मन में यह होता है – जिस तरह के पाप-कर्म करने से एक चोर को, एक अपराधी को राजा के आदमी पकड़कर ले जाते हैं और नाना प्रकार के दंड देते हैं, कोड़े से भी मारते हैं... तलवार से सिर भी काट डालते हैं। मैं भी यदि ऐसा पाप-कर्म करूंगा, तो मुझे भी राजा के आदमी पकड़कर ले जायेंगे और इसी प्रकार से नाना दंडों से दंडित करेंगे, कोड़े से भी मारेंगे... तलवार से सिर भी काट डालेंगे।

"वह इसी जन्म में फल देने वाले दुष्कर्म से डरकर दूसरों की वस्तुएं लूटता हुआ नहीं घूमता है। भिक्षुओ, यह कहलाता है इसी जन्म में बुरा फल देने वाला दुष्कर्म।"

"भिक्षुओ, परलोक में फल देने वाला दुष्कर्म क्या है?"

"भिक्षुओ, कोई-कोई इस प्रकार विचार करता है – कायिक दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल होता है, वाचिक दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल होता है, मानसिक दुष्कर्म का परलोक में बुरा फल होता है। अगर मैं शरीर से दुष्कर्म करूं, वाणी से दुष्कर्म करूं, मन से दुष्कर्म करूं तो क्या इससे मैं शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति में पड़कर नरक में पैदा नहीं होऊंगा?

"इस तरह वह परलोक में फल देने वाले दुष्कर्म से भयभीत हो जाने के कारण शारीरिक दुष्कर्मों का त्याग कर, शारीरिक सत्कर्मों का अभ्यास करता है, वाचिक दुष्कर्मों का त्याग कर, वाचिक सत्कर्मों का अभ्यास करता है, मानसिक दुष्कर्मों का त्याग कर, मानसिक सत्कर्मों का अभ्यास करता है और अपने आपको शुद्ध बनाता है। भिक्षुओ, यह परलोक में फल देने वाला दुष्कर्म कहलाता है। भिक्षुओ, ये दो प्रकार के दुष्कर्म हैं।

"इसलिए भिक्षुओ, यह सीखना चाहिए कि हमलोग इसी जन्म में बुरा फल देने वाले दुष्कर्म से डरेंगे, परलोक में बुरा फल देने वाले दुष्कर्म से डरेंगे, दोष में भय मानने वाले होंगे, दोष में भय देखने वाले होंगे। इसी प्रकार भिक्षुओ, सीखना चाहिए। भिक्षुओ, यह आशा करनी चाहिए कि दोष में भय मानने वाला, दोष में भय देखने वाला सभी दोषों से पूरी तरह मुक्त हो जायगा।"

२. प्रधानसुत्त

२. "भिक्षुओ, लोक में यह दो दुष्कर कार्य हैं। कौन-से दो? एक तो गृहस्थों का घर में रहते समय चीवर, पिंडपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय औषध आदि आवश्यक वस्तुओं का दान करने का दुष्कर कार्य; दूसरा, घर से बेघर

हुए अनागारिक प्रव्रजितों का सर्व उपधियों (जो फिर जन्म देने का कारण बनें) के परित्याग का कठिन प्रयास।

"भिक्षुओ, लोक में ये दो दुष्कर कार्य हैं। भिक्षुओ, इन दोनों दुष्कर कार्यों में यह जो सर्व उपधियों का परित्याग करना है, यही अधिक दुष्कर कार्य है। इसलिए भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए कि सभी उपधियों का परित्याग करने का प्रयास करेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए।"

३. अनुतापसुत्त

३. "भिक्षुओ, ये दो अनुताप पैदा करनेवाले धर्म (बातें) हैं। कौन-से दो?

"भिक्षुओ, किसी ने शरीर से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; वाणी से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; मन से दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता।

''वह यह सोचकर अनुतप्त होता है कि मैंने शरीर से दुष्कर्म किया, शरीर से शुभ-कर्म नहीं किया, यह सोचकर अनुतप्त होता है कि मैंने वाणी से दुष्कर्म किया, वाणी से शुभ-कर्म नहीं किया, यह सोचकर अनुतप्त होता है कि मन से दुष्कर्म किया, शुभ-कर्म नहीं किया। भिक्षुओ, ये दो अनुताप पैदा करने वाले धर्म हैं।"

४. अननुतापसुत्त

४. "भिक्षुओ, ये दो अनुताप न पैदा करने वाले धर्म हैं। कौन-से दो?

"भिक्षुओ, किसी ने शरीर से शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता... मन से... वह यह सोचकर अनुतप्त नहीं होता कि मैंने शरीर से शुभ-कर्म किया है, यह सोचकर अनुतप्त नहीं होता कि मैंने शरीर से दुष्कर्म नहीं किया है... मन से...।

"भिक्षुओ, ये दो अनुताप न पैदा करने वाले धर्म हैं।"

५. उपज्ञातसुत्त

५. "भिक्षुओ, मैंने दो बातों को उपज्ञात किया (गहराई से जाना) है, एक तो कुशल धर्मों में असंतुष्ट रहने को, दूसरे अप्रतिवारित[१], अनारोधित (बिना पीछे हटे) कठोर प्रयत्न करने को। भिक्षुओ, मैंने अप्रतिवारित कठोर प्रयत्न

१ यहां पालि में **'अप्पटिवानिता'** शब्द है। इसका अर्थ हमारी समझ में अप्रतिवारित है, बिना पीछे हटे, बिना कतराये प्रयत्न करना है। अट्ठकथा में **'अप्पटिवानितांति अप्पटिक्कमना, अनोसक्कनां'** कहा गया है जिसका अर्थ 'बिना प्रतिक्रमण किये, बिना पीछे हटे' होता है।

किया है, यह सोचकर कि चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायं, शरीर का मांस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्तव्य है, उसे प्राप्त करने तक पुरुषार्थ जारी रहेगा। इस प्रकार, भिक्षुओ, मेरी संबोधि अप्रमाद से ही प्राप्त हुई है, अनुत्तर-योगक्षेम भी अप्रमाद से ही प्राप्त हुआ है।

"भिक्षुओ, यदि तुम भी अनारोधित कठोर प्रयत्न करो –चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायं, शरीर का मांस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य, तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्तव्य हो सकता है, उसे प्राप्त करने तक पुरुषार्थ जारी रखो तो भिक्षुओ, तुम भी जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुलपुत्र ठीक ही घर से बे-घर होकर प्रव्रजित हो जाते हैं, उस श्रेष्ठ, ब्रह्मचर्य-फल को इसी जन्म में स्वयं अभिज्ञात कर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार करोगे।

"इसीलिए, भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए -- अनारोधित कठोर पुरुषार्थ करते रहेंगे –चाहे त्वचा, नसें और हड्डी ही शेष रह जायं, शरीर का मांस-रक्त सूख जाये, जो कुछ पुरुष-सामर्थ्य, पुरुष-वीर्य, तथा पुरुष-पराक्रम से प्राप्तव्य हो सकता है, उसे प्राप्त करने तक पुरुषार्थ जारी रहेगा। भिक्षुओ, ऐसा ही सीखना चाहिए।"

६. संयोजनसुत्त

६. "भिक्षुओ, दो धर्म हैं।

"कौन-से दो?

"एक तो संयोजनीय धर्मों में आस्वादन देखना और दूसरे संयोजनीय धर्मों को निर्वेदपूर्वक देखना। भिक्षुओ, संयोजनीय धर्मों का आस्वादन करने वाला राग का त्याग नहीं करता, द्वेष का त्याग नहीं करता, मोह का त्याग नहीं करता। राग, द्वेष तथा मोह का त्याग न करने के कारण वह जाति, जरा, मरण, शोक, क्रंदन, दुःख, दौर्मनस्य तथा चिंता से मुक्त नहीं होता। वह दुःख से परिमुक्त नहीं होता – ऐसा मैं कहता हूं।

"भिक्षुओ, संयोजनीय धर्मों में निर्वेद की अनुपश्यना करते हुए विचरण करनेवाला राग का त्याग कर देता है, द्वेष का त्याग कर देता है, मोह का त्याग कर देता है। राग, द्वेष तथा मोह का त्याग कर देने के कारण वह जाति, जरा, मरण, शोक, क्रंदन, दुःख, दौर्मनस्य तथा चिंता से मुक्त होता है। वह दुःख से परिमुक्त होता है – ऐसा मैं कहता हूं।"

७. कृष्णसुत्त

७. "भिक्षुओ, दो कृष्ण-धर्म हैं?

"कौन-से दो?

"निर्लज्ज होना तथा (दुष्कर्मकरनेमें) पापभीरु न होना। भिक्षुओ, ये दो कृष्ण-धर्म हैं।"

८. शुक्लसुत्त

८. "भिक्षुओ, दो शुक्ल-धर्म हैं।

"कौन-से दो?

"लज्जावान होना तथा (दुष्कर्मकरनेमें) पापभीरु होना। भिक्षुओ, ये दो शुक्ल-धर्म हैं।"

९. चर्या (आचरण) सुत्त

९. "भिक्षुओ, ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन करते हैं।

"कौन-से दो?

"लज्जा तथा पापभीरुता। भिक्षुओ, यदि ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन न करें तो न माता दिखाई दे, न मौसी दिखाई दे, न मामी दिखाई दे, न गुरु-पत्नी दिखाई दे अथवा न अपने से बड़े किसीकी भार्या दिखाई दे; लोक में स्वच्छंद आचार हो जाय, जैसे भेड़, बकरी, मुर्गी, सूअर, कुत्ते तथा गीदड़ के होते हैं। क्योंकि भिक्षुओ, ये दो शुक्ल-धर्म लोक का पालन करते हैं, इसी से माता भी दिखाई देती है, मौसी भी दिखाई देती है, मामी भी दिखाई देती है, गुरु-पत्नी भी दिखाई देती है और अपने से बड़े किसीकी भार्या भी दिखाई देती है।"

१०. वर्षोपनायिकासुत्त

१०. "भिक्षुओ, दो वर्षा-वास हैं?

"कौन-से दो?

"पहला और पिछला। भिक्षुओ, ये दो वर्षा-वास हैं।"

* * * * *

२. प्रबंध कौशल वर्ग

११. "भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

"कौन-से दो?

"प्रत्यवेक्षण-बल तथा अभ्यास-बल (भावना-बल)।

"भिक्षुओ, प्रत्यवेक्षण-बल (प्रतिसंख्यानबल) क्या है?

"भिक्षुओ, एक (व्यक्ति) यह प्रत्यवेक्षण करता है कि कायिक-दुश्चरित का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है, वाचिक-दुश्चरित का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है, मानसिक-दुश्चरित का इस लोक तथा परलोक में बुरा परिणाम होता है।

"वह ऐसा प्रत्यवेक्षण कर, कायिक दुष्कर्मों को छोड़ कर, कायिक शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है,... मानसिक दुष्कर्मों को छोड़ कर, मानसिक शुभ-कर्मों का अभ्यास करता है, वह पवित्र जीवन व्यतीत करता है। भिक्षुओ, यह प्रत्यवेक्षण-बल कहलाता है।

"भिक्षुओ, अभ्यास-बल (भावना-बल) क्या है?

"भिक्षुओ, यह जो अभ्यास-बल है यह साधकों (शैक्ष्यों) का बल है। साधक (शैक्ष्य) इसी बल से राग को छोड़ देता है, द्वेष को छोड़ देता है, मोह को छोड़ देता है। राग, द्वेष तथा मोह को छोड़कर जो अकुशल-कर्महैं, उन्हें नहीं करता है, जो पाप-कर्महैं उनसे दूर रहता है।

"भिक्षुओ, यह अभ्यास-बल कहलाता है। भिक्षुओ, ये दो बल हैं।"

१२. "भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

"कौन-से दो?

"प्रत्यवेक्षण-बल तथा अभ्यास-बल।

"भिक्षुओ, प्रत्यवेक्षण-बल कौन-सा है? भिक्षुओ, एक व्यक्ति यह प्रत्यवेक्षण करता है... (पूर्वानुसार)। भिक्षुओ, यह कहलाता है प्रत्यवेक्षण-बल।"

"भिक्षुओ, अभ्यास-बल कौन-सा है?

"भिक्षुओ, भिक्षु स्मृति-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है जो कि प्रविवेकाश्रित (निर्लिप्त) है, वैराग्य-आश्रित है, निरोधाश्रित है और जो उत्सर्गपरिणामी (संपूर्ण त्याग में अंत होने वाला) है।

"धर्मविचय-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"वीर्य-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"प्रीति-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"प्रश्रब्धि-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"समाधि-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"उपेक्षा-संबोधि-अंग का अभ्यास करता है, जो कि...।

"भिक्षुओ, इसे अभ्यास-बल कहते हैं। भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

१३. "भिक्षुओ, ये दो बल हैं।

"कौन-से दो?

"प्रत्यवेक्षण-बल तथा अभ्यास-बल।

"भिक्षुओ, प्रत्यवेक्षण-बल कौन-सा है?

"भिक्षुओ, एक व्यक्ति... यह प्रत्यवेक्षण-बल कहलाता है... (पूर्वानुसार)

"भिक्षुओ, अभ्यास-बल कौन-सा है?

"भिक्षुओ, यहां एक भिक्षु कामभोगों से अलग, पृथक हो, अकुशल-धर्मों से पृथक हो, सवितर्क, सविचार, विवेक (एकांत) जन्य, प्रीति सुख-युक्त प्रथम-ध्यानलाभी हो विहार[1] करता है; वितर्क-विचारों के उपशमन होने के अनंतर, आंतरिक प्रसाद-युक्त, चित्त की एकाग्रता-युक्त, वितर्क-विचार-रहित, समाधिजन्य प्रीतिसुख-युक्त द्वितीय-ध्यान का लाभी हो विहार करता है; प्रीति से भी वैराग्य-युक्त हो, उपेक्षावान बन विहार करता है, स्मृतिमान हो, संप्रज्ञानी हो, काया से सुखद संवेदनाओं का अनुभव करता है, जिसके बारे में आर्य-जन कहते हैं –'उपेक्षावान है, स्मृतिमान है, सुखपूर्वक विहार करने वाला है', ऐसा तृतीय-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है; सुख और दुःख दोनों का प्रहाण कर पूर्वस्थित सौमनस्य-दौर्मनस्य के अस्तगमन होने से, अदुःख-असुख रूप उपेक्षा-स्मृति से परिशुद्ध चतुर्थ-ध्यान लाभी हो विहार करता है। भिक्षुओ, यह कहलाता है अभ्यास-बल। भिक्षुओ, ये दो बल हैं।"

१४. "भिक्षुओ, तथागत की धर्म-देशना दो प्रकार की होती है। कौन-से दो प्रकार की? संक्षिप्त तथा विस्तृत। भिक्षुओ, ये दो प्रकार की तथागत की धर्म-देशना है।"

१५. "भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण (झगड़े) में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक रूप से प्रत्यवेक्षण नहीं करते, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इसी बात की आशा करनी चाहिए कि उनका कलह दीर्घकाल तक जारी रहेगा, वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे, हिंस्र बने रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक न रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक प्रत्यवेक्षण करते हैं, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिए कि न उनका कलह दीर्घकाल तक जारी रहेगा, न

१ ध्यान में समय बिताना।

वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और न हिंस्र बने रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, प्रतिवादी-भिक्षु अपने बारे में किस प्रकार सम्यक प्रत्यवेक्षण करता है?

"भिक्षुओ, प्रतिवादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक प्रत्यवेक्षण करता है –मैंने शरीर से कुछ दोष किया। उस भिक्षु ने देख लिया कि मैंने शरीर से कुछ दोष किया। यदि मैंने शरीर से कोई दोष न किया होता तो वह भिक्षु न देखता कि मैंने शरीर से कोई दोष किया है। क्योंकि मैंने शरीर से दोष किया, इसीलिए उस भिक्षु ने देखा कि मैंने शरीर से दोष किया। यह देखकर कि मैंने शरीर से दोष किया वह भिक्षु असंतुष्ट हुआ, असंतुष्ट होकर उस भिक्षु ने मुझे असंतुष्ट करने वाले वचन कहे। उस भिक्षु से असंतोषपूर्ण वचन सुनकर मैं असंतुष्ट हुआ। असंतुष्ट होकर मैंने दूसरों से कहना-सुनना किया। इसमें मेरा ही दोष है, मेरा ही अपराध है जैसे माल पर बिना चुंगी (कस्टम-ड्यूटी) दिये उसे ले जाने वाला अपराधी हो।

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में किस प्रकार सम्यक प्रत्यवेक्षण करता है?

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक विचार करता है – इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया। मैंने देखा कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया। यदि यह भिक्षु शरीर से कुछ दुष्कर्म न करता तो मैं यह न देखता कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है। क्योंकि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है, तभी मैंने देखा कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है। यह देखकर कि इस भिक्षु ने शरीर से कुछ दुष्कर्म किया है, मैं असंतुष्ट हुआ। असंतुष्ट होकर मैंने इस भिक्षु को असंतुष्ट करने वाली बात कही। मेरी असंतुष्ट करने वाली बात सुनकर यह भिक्षु असंतुष्ट हुआ। असंतुष्ट होकर इसने दूसरों से कहना-सुनना किया। इसमें मेरा ही दोष है, मेरा ही अपराध है, जैसे कोई माल पर बिना चुंगी दिये उसे ले जाने वाला अपराधी हो।

"भिक्षुओ, वादी-भिक्षु अपने बारे में इस प्रकार सम्यक प्रत्यवेक्षण करता है।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक प्रत्यवेक्षण नहीं करते, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिए कि उनका कलह दीर्घकाल तक जारी रहेगा,

वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और हिंस्र बने रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक न रह सकेंगे।

"भिक्षुओ, जिस किसी अधिकरण में प्रतिवादी-भिक्षु तथा वादी-भिक्षु स्वयं अपने बारे में सम्यक प्रत्यवेक्षण करते हैं, भिक्षुओ, उस अधिकरण में इस बात की आशा रखनी चाहिए कि न उनका कलह दीर्घकालतक जारी रहेगा, न वे परस्पर कठोर बोलते रहेंगे और न हिंस्र बने रहेंगे तथा भिक्षु सुखपूर्वक रह सकेंगे।"

१६. अब एक ब्राह्मण भगवान के पास गया। जाकर भगवान के साथ बातचीत की और कुशलक्षेम पूछा। कुशलक्षेम पूछ चुकने के बाद वह ब्राह्मण एक ओर जाकर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मण ने भगवान को कहा – "भो गौतम! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है, जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर नरक में उत्पन्न होते हैं?"

"ब्राह्मण! इसका कारण, इसका हेतु अधर्माचरण है, विषम आचरण है, जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर नरक में उत्पन्न होते हैं।"

"भो गौतम! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद सुगति को प्राप्तकर स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं?"

"ब्राह्मण! इसका कारण, इसका हेतु धर्माचरण है, समाचरण है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद सुगति को प्राप्तकर स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं।"

"सुंदर, गौतम! बहुत सुंदर, गौतम! जैसे कोई उल्टे को सीधा कर दे, ढँके को उघाड़ दे, मार्ग-भूले को रास्ता बता दे अथवा अंधेरे में मशाल धारण करे, जिससे आंख वाले चीजों को देख सकें। इसी प्रकार गौतम ने अनेक प्रकार से धर्म को प्रकाशित किया है। मैं आप गौतम, धर्म तथा संघ की शरण जाता हूं। गौतम! आज से जीवनपर्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

१७. अब जाणुस्सोणि ब्राह्मण भगवान के पास गया और भगवान के साथ बातचीत की...एक ओर बैठे हुए जाणुस्सोणि ब्राह्मण ने भगवान से कहा –"भो गौतम! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर नरक में उत्पन्न होते हैं?"

"ब्राह्मण! करने (अकुशल कर्म करने) तथा न करने (कुशल कर्म न करने) के कारण यहां कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर, नरकमें उत्पन्न होते हैं।"

"भो गौतम! इसका क्या कारण है, क्या हेतु है जिससे कुछ प्राणी शरीर छूटने पर सुगति को प्राप्तकर, स्वर्गलोकमें उत्पन्न होते हैं?"

"ब्राह्मण! करने तथा न करने के कारण यहां कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद सुगति को प्राप्तकर, स्वर्गलोक्में उत्पन्न होते हैं।"

"मैं आप गौतम के इस संक्षेप से कथित तथा विस्तार से अकथित भाषण का विस्तार से अर्थ नहीं जानता। अच्छा हो यदि आप गौतम मुझे इस प्रकार धर्मोपदेश करें जिससे मैं आप गौतम के संक्षिप्त से कथित तथा विस्तार से अकथित भाषण का विस्तार से अर्थ जान लूं।"

"तो ब्राह्मण सुन! अच्छी तरह मन में धारण कर, मैं कहता हूं।"

'बहुत अच्छा' कहकर जाणुस्सोणि ब्राह्मण ने भगवान को प्रत्युत्तर दिया। भगवान ने यह कहा –

"ब्राह्मण! यहां एक व्यक्ति ने कायिक दुष्कर्म किया होता है, शुभकर्म नहीं किया होता; वाचिक दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता; मानसिक दुष्कर्म किया होता है, शुभ-कर्म नहीं किया होता। इस प्रकार ब्राह्मण! करने तथा न करने से यहां कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर नरकमें उत्पन्न होते हैं।

"ब्राह्मण! यहां एक व्यक्ति ने कायिक शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता; वाचिक शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता; मानसिक शुभ-कर्म किया होता है, दुष्कर्म नहीं किया होता। इस प्रकार ब्राह्मण! करने तथा न करने से यहां कुछ प्राणी शरीर छूटने पर, मरने के बाद सुगति को प्राप्तकर स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं।"

"सुंदर, गौतम! बहुत सुंदर,... गौतम! आज से जीवनपर्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

१८. अब आयुष्मान आनन्द भगवान के पास गये। पास जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठे: एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्द को भगवान ने यह कहा –"आनन्द! मैं शारीरिक दुष्कर्म, वाचिक दुष्कर्म तथा मानसिक दुष्कर्म को संपूर्ण रूप से अकरणीय कहता हूं।"

"भंते! भगवान ने जो यह कायिक दुष्कर्म, वाचिक दुष्कर्म तथा मानसिक दुष्कर्म को संपूर्ण रूप से अकरणीय कहा है, उस अकरणीय के करने पर किस दुष्परिणाम की आशा करनी चाहिए?"

"आनन्द! यह जो मैंने संपूर्ण रूप से अकरणीय कहा है... उस अकरणीय के करने पर इस दुष्परिणाम की आशा की जानी चाहिए –अपने-आप अपनी

निंदा करता है (खुद की नजरों में गिर जाता है)। विज्ञ लोग मालूम होने पर निंदा करते हैं; अपयश होता है; मूढ़ावस्था में मृत्यु को प्राप्त होता है; शरीर छूटने पर, मरने के बाद अपायगति, दुर्गति को प्राप्तकर नरक में उत्पन्न होता है। आनन्द! मैंने जो यह कायिक दुष्कर्म, वाचिक दुष्कर्म तथा मानसिक दुष्कर्म को संपूर्ण रूप से अकरणीय कहा है, उस अकरणीय के करने पर, इस दुष्परिणाम की आशा करनी चाहिए।"

"आनन्द! मैं कायिक शुभकर्म, वाचिक शुभकर्म और मानसिक शुभकर्म संपूर्ण रूप से करणीय कहता हूं।"

"भंते! भगवान ने जो यह कायिक शुभकर्म, वाचिक शुभकर्म तथा मानसिक शुभकर्म को संपूर्ण रूप से करणीय कहा है, उस करणीय के करने पर किस सुपरिणाम (लाभ) की आशा करनी चाहिए?"

"आनन्द! यह जो मैंने संपूर्ण रूप से करणीय कहा है... उस करणीय के करने पर इस सुपरिणाम की आशा की जानी चाहिए – अपने-आप अपनी निंदा नहीं करता है (खुद की नजरों में नहीं गिरता); विज्ञ लोग मालूम होने पर प्रशंसा करते हैं; कल्याणमयी कीर्ति फैलती है; जागरूक होकर मृत्यु को प्राप्त होता है; शरीर छूटने पर, मरने के बाद सुगति को प्राप्तकर, स्वर्ग-लोक में उत्पन्न होता है। आनन्द! यह जो मैंने संपूर्ण रूप से करणीय कहा है, उस करणीय के करने पर इस सुपरिणाम की आशा की जानी चाहिए।"

१९. "भिक्षुओ, अकुशल को छोड़ो। भिक्षुओ, अकुशल छोड़ा जा सकता है। यदि भिक्षुओ, यह न हो सकता कि अकुशल छोड़ा जा सकता, तो मैं ऐसा न कहता कि 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।' लेकिन भिक्षुओ, क्योंकि अकुशल छोड़ा जा सकता है, इसलिए मैं ऐसा कहता हूं 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।'

"भिक्षुओ, यदि अकुशल का प्रहाण होने से अहित और दुःख होता, तो मैं ऐसा नहीं कहता 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।' लेकिन क्योंकि भिक्षुओ, अकुशल का प्रहाण हित तथा सुख का कारण होता है, इसलिए मैं ऐसा कहता हूं, 'भिक्षुओ, अकुशल छोड़ो।'

"भिक्षुओ, कुशल की भावना करो। भिक्षुओ, कुशल की भावना की जा सकती है। भिक्षुओ, यदि कुशल की भावना नहीं हो सकती, तो मैं ऐसा न कहता कि 'भिक्षुओ, कुशल की भावना करो।' लेकिन क्योंकि भिक्षुओ, कुशल की भावना हो सकती है, इसलिए मैं ऐसा कहता हूं कि 'भिक्षुओ, कुशल की भावना करो।'

"भिक्षुओ, यदि कुशल की भावना करने से अहित और दुःख होता, तो मैं ऐसा नहीं कहता, 'भिक्षुओ, कुशल की भावना करो।' लेकिन क्योंकि भिक्षुओ, कुशल की भावना हित और सुख का कारण लिए होती है, इसलिए मैं यह कहता हूं कि 'भिक्षुओ, कुशल की भावना करो।'

२०. "भिक्षुओ, दो बातें सद्धर्म को भुला देने का (उसके लोप का), उसके अंतर्धान का कारण होती हैं। कौन-सी दो?

"पदों को गलत ढंग से रखना (अव्यवस्थित पद) तथा उनके अर्थ का अनर्थ करना (अनर्गल अर्थ)।

"भिक्षुओ, पदों को गलत रखने से उनके अर्थ का भी अनर्थ होता है। भिक्षुओ, ये दो बातें सद्धर्म के लोप का, उसके अंतर्धान का कारण होती हैं।"

२१. "भिक्षुओ, दो बातें सद्धर्म के स्थित होने का, उसके लोप न होने का, उसके अंतर्धान न होने का कारण होती हैं। कौन-सी दो?

"पदों को ठीक-ठीक रखना (सुव्यवस्थित पद) तथा उनका सही-सही अर्थ।

"भिक्षुओ, पदों को ठीक-ठीक रखने से उनका अर्थ भी सही-सही रहता है।

"भिक्षुओ, ये दो बातें सद्धर्म के स्थित रहने का, उसके लोप न होने का, उसके अंतर्धान न होने का कारण होती हैं।"

* * * * *

३. मूर्ख वर्ग

२२. "भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"कौन-से दो?

"एक जो अपने दोष को दोष नहीं मानता, दूसरा जो अपने दोष को दोष मानने वाले को क्षमा नहीं करता।

"भिक्षुओ, ये दो मूर्ख हैं।

"भिक्षुओ, ये दो पंडित हैं।

"कौन-से दो?

"एक जो अपने दोष को दोष मानता है, दूसरा जो अपने दोष को दोष मानने वाले को क्षमा करता है। भिक्षुओ, ये दो पंडित हैं।"

२३. "भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप (गलत दोषारोपण) करते हैं।

"कौन-से दो?

"दुष्ट मन वाला द्वेषी तथा मिथ्यादृष्टि वाला श्रद्धावान। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।"

२४. "भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।

"कौन-से दो?

"जो तथागत द्वारा अभाषित तथा अकथित है उसे तथागत द्वारा भाषित तथा कथित बताता है, और जो तथागत द्वारा भाषित तथा कथित है उसे तथागत द्वारा अभाषित तथा अकथित बताता है। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।

"कौन-से दो?

"जो तथागत द्वारा अभाषित अकथित है उसे तथागत द्वारा अभाषित अकथित कहता है; जो तथागत द्वारा भाषित कथित है उसे तथागत द्वारा भाषित, कथित कहता है।

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।"

२५. "भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं। कौन-से दो? जो नेयार्थ-सूत्र[१] (व्यवहार-भाषा) को नीतार्थ-सूत्र (परमार्थ-भाषा) करके प्रकट करता है, और जो नीतार्थ-सूत्र को नेयार्थ-सूत्र करके प्रकट करता है। भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप करते हैं।"

---

१ यहां पालि में दो शब्द आये है -- **'नेय्यत्थं और नीतत्थं'** जिनका अर्थ क्रमशः नेयार्थ और नीतार्थ होता है । व्यवहार की जानेवाली भाषा को नेयार्थ और परमार्थ प्रकट करनेवाली भाषा को नीतार्थ कहते हैं। भगवान जब कहते हैं कि 'भिक्षुओ, एक प्रकार का पुद्गल है, दो प्रकार के पुद्गल हैं' आदि तो नेयार्थ हुआ। इससे यह समझना चाहिए कि परमार्थतः पुद्गल नहीं है – यह नीतार्थ हुआ। यदि कोई मूर्खतावश यह कहने लगे कि यदि परमार्थतः पुद्गल नहीं होता तो भगवान 'एक प्रकार का पुद्गल है, दो प्रकार के पुद्गल हैं' आदि नहीं कहते। अतः वह नेयार्थ को नीतार्थ के रूप में ग्रहण करता है। नीतार्थ है कि सभी संस्कार अनित्य, दुःख और अनात्म हैं। यदि कोई मूर्खतावश कहे कि यह कथन नेयार्थ है जिसका अर्थ है 'नित्य, सुख और आत्मा है' तो वह नीतार्थ को नेयार्थ के रूप में ग्रहण करेगा। **'रूपं भिक्खवे, न तुम्हाकं, तं पजहथ'** (भिक्षुओ, रूप तुम्हारा नहीं है, उसका त्याग करो) – इस वाक्य से यदि कोई यह अर्थ लगाये कि रूप है तभी न ऐसा कहा गया है, तो वह भूल करेगा। इसका नेयार्थ न लेकर नीतार्थ लेना चाहिए। नीतार्थ यह है कि रूप में जो छन्दराग है, आसक्ति है उसका त्याग करने के लिए कहा गया है।

२६. "भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।

"कौन-से दो?

"जो नेयार्थ-सूत्र को नेयार्थ-सूत्र करके प्रकट करता है और जो नीतार्थ-सूत्र को नीतार्थ करके प्रकट करता है।

"भिक्षुओ, ये दो तथागत पर मिथ्यारोप नहीं करते।"

२७. "भिक्षुओ, ढँके हुए कर्म (प्रच्छन्न-कर्म, पाप-कर्म) करने वाले के लिए दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिए –नरक या पशु-योनि।

"भिक्षुओ, खुले कर्म (पुण्य-कर्म) करनेवाले के लिए दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिए – देव या मनुष्य।"

२८. "भिक्षुओ, मिथ्या-दृष्टि व्यक्ति के लिए दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिए – नरक्या पशु-योनि।"

२९. "भिक्षुओ, सम्यक-दृष्टि व्यक्ति के लिए दो गतियों में से एक गति की आशा करनी चाहिए – देव या मनुष्य।"

३०. "भिक्षुओ, दुःशील की दो जगह राह देखी जाती है –नरक में या पशु-योनि में।"

"भिक्षुओ, शीलवान की दो जगह राह देखी जाती है –देव या मनुष्य में।"

३१. "भिक्षुओ, मैं दो परिणामों को भली-भांति देखकर ही जंगल में, वन में एकांत-निवास का सेवन करता हूं।

"कौन-से दो?

"निजी इहलौकिक सुख-विहार के लिए तथा बाद में आने वाले लोगों पर अनुकंपा करने के लिए। भिक्षुओ, मैं इन दो परिणामों को भली-भांति देखकर ही जंगल में, वन में एकांत-निवास का सेवन करता हूं।"

३२. "भिक्षुओ, दो धर्म विद्यापक्षीय हैं।

"कौन-से दो?

"शमथ तथा विपश्यना।

"भिक्षुओ, शमथ की भावना करने से क्या लाभ होता है? चित्त भावित होता है। चित्त के भावित होने से क्या लाभ होता है? समस्त राग का प्रहाण होता है।

"भिक्षुओ, विपश्यना के अभ्यास से क्या लाभ होता है? प्रज्ञा भावित होती है। प्रज्ञा भावित होने से क्या लाभ होता है? समस्त अविद्या का प्रहाण

होता है। भिक्षुओ, राग से दूषित चित्त मुक्त नहीं होता और अविद्या से दूषित प्रज्ञा भावित नहीं होती। भिक्षुओ, यह रागरहित होना चित्त-विमुक्ति[१] है तथा अविद्यारहित होना प्रज्ञा-विमुक्ति है।"

* * * * *

४. समचित्त वर्ग

३३. "भिक्षुओ, मैं असत्पुरुष-भूमि तथा सत्पुरुष-भूमि की देशना करता हूं। उसे सुनो, अच्छी तरह मन में धारण करो, कहता हूं।"

"भंते! अच्छा" कहकर उन भिक्षुओं ने भगवान को प्रत्युत्तर दिया। भगवान ने यह कहा –

"भिक्षुओ, असत्पुरुष-भूमि कौन-सी है?

"भिक्षुओ, असत्पुरुष अकृतज्ञ होता है, कृत-उपकार को न जानने वाला। भिक्षुओ, इस अकृतज्ञता की, इस अकृतवेदिता (उपकार को भूलने) की असभ्यों (असत्पुरुषों) ने ही प्रशंसा की है। भिक्षुओ, यह जो अकृतज्ञता है, यह जो अकृतवेदिता है, यह संपूर्णतः असत्पुरुष-भूमि है।

"भिक्षुओ, सत्पुरुष कृतज्ञ होता है, कृत-उपकार को जानने वाला। भिक्षुओ, इस कृतज्ञता की, इस कृतवेदिता की सभ्यों (सत्पुरुषों) ने ही प्रशंसा की है। भिक्षुओ, यह जो कृतज्ञता है यह जो कृतवेदिता है, यह संपूर्णतः सत्पुरुष-भूमि है।"

३४. "भिक्षुओ, दो का प्रत्युपकार नहीं किया जा सकता।

"किन दो का?

"माता का तथा पिता का। भिक्षुओ, सौ वर्ष तक एक कंधे पर माता को ढोये तथा एक कंधे पर पिता को ढोये, और वह उनकी उबटन मलने, मर्दन करने, नहलाने तथा हाथ-पैर दबाने आदि से सेवा करे, और वे भी उसके कंधे पर ही मल-मूत्र कर दें, तो भी भिक्षुओ, यह माता-पिता के किये का प्रत्युपकार नहीं होता। भिक्षुओ, यदि इस रत्न-बहुल पृथ्वी का ऐश्वर्य-राज्य भी माता-पिता

---

१ पालि में **'चेतोविमुत्ति, पञ्ञाविमुत्ति'** – दो प्रकार की विमुक्तियां कही गयी हैं जिनका अर्थ चित्त-विमुक्ति और प्रज्ञा-विमुक्ति है। **'चेतोविमुक्ति'** से राग का प्रहाण होता है और **'पञ्ञाविमुक्ति'** से अविद्या का। शमथ की भावना करने से चित्त भावित होता है। फलतः सभी रागों का प्रहाण होता है। विपश्यना की भावना करने से प्रज्ञा भावित होती है। फलतः अविद्या का प्रहाण होता है। रागरहित होना चित्त-विमुक्ति है – **रागविरागा चेतोविमुत्ति** और अविद्यारहित होना प्रज्ञाविमुक्ति है – **अविज्जाविरागा पञ्ञाविमुत्ति**।

को सौंप दिया जाय तब भी यह माता-पिता के किये का प्रत्युपकार नहीं होता। यह किसलिए? भिक्षुओ, माता-पिता का पुत्रों पर बहुत उपकार है। वे उनकी देखभाल करते हैं, पोषण करते हैं, वे उन्हें यह लोक दिखाते हैं। अर्थात, वे उन्हें इस लोक से परिचित कराते हैं।

"भिक्षुओ, जो कोई अश्रद्धावान माता-पिता को श्रद्धासंपदा में प्रेरित करता है, स्थापित करता है, प्रतिष्ठापित करता है, दुःशील माता-पिता को शीलसंपदा में प्रेरित करता है, स्थापित करता है, प्रतिष्ठापित करता है, कृपण माता-पिता को त्यागसंपदा में प्रेरित करता है, स्थापित करता है, प्रतिष्ठापित करता है, दुष्प्रज्ञ माता-पिता को प्रज्ञा-संपदा में प्रेरित करता है, स्थापित करता है, प्रतिष्ठापित करता है – तब कहीं माता-पिता के किये का प्रत्युपकार होता है।"

३५. अब एक ब्राह्मण भगवान के पास गया, जाकर भगवान के साथ बातचीत की... एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान से यह कहा –

"आप गौतम का क्या वाद, क्या मत है?"

"ब्राह्मण! मैं क्रियावादी हूं तथा अक्रियावादी हूं।"

"आप गौतम! क्रियावादी तथा अक्रियावादी किस प्रकार हैं?"

"मैं, ब्राह्मण! न करने की बात करता हूं – कायिक दुराचरणों, वाचिक दुराचरणों, मानसिक दुराचरणों, अनेक प्रकार के अकुशल-धर्मों के न करने की बात करता हूं। मैं, ब्राह्मण! करने की बात करता हूं – कायिक सदाचरणों, वाचिक सदाचरणों, मानसिक सदाचरणों, अनेक प्रकार के कुशल-धर्मों के करने की बात करता हूं। ब्राह्मण! इस प्रकार मैं क्रियावादी तथा अक्रियावादी हूं।"

"सुंदर, गौतम! बहुत सुंदर,... जीवनपर्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

३६. अब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान के पास गया, जाकर भगवान को प्रणाम कर...एक ओर बैठे हुए अनाथपिण्डिक गृहपति ने भगवान से यह कहा –

"भंते! लोक में दाक्षिणेय्य (दक्षिणार्ह) कितने हैं? दान कहां देना चाहिए?"

"गृहपति! लोक में दो दक्षिणार्ह हैं, शैक्ष तथा अशैक्ष। गृहपति! ये दो दक्षिणार्ह हैं। इन्हें दान दिया जाना चाहिए।"

भगवान ने यह कहा और यह कहकर तदनंतर शास्ता ने यह कहा –

"सेखो असेखो च इमस्मिं लोके, आहुनेय्या यजमानानं होन्ति।
ते उज्जुभूता कायेन, वाचाय उद चेतसा।
खेत्तं तं यजमानानं, एत्थ दिन्नं महप्फल"न्ति॥

[यजमानों के लिए संसार में शैक्ष तथा अशैक्ष दो दक्षिणार्ह हैं। वे शरीर, वाणी तथा मन से ऋजु होते हैं। ये यजमानों के (पुण्य-) क्षेत्र हैं। इन्हें देने का महान फल होता है।]

३७. ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के जेतवनाराम में विहार करते थे। उस समय आयुष्मान सारिपुत्त श्रावस्ती में मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में रहते थे। तब आयुष्मान सारिपुत्त ने भिक्षुओं को संबोधित किया – "आयुष्मान भिक्षुओ!" उन भिक्षुओं ने आयुष्मान सारिपुत्त को प्रत्युत्तर दिया – "आयुष्मान।"

आयुष्मान सारिपुत्त ने यह कहा –

"आयुष्मानो! मैं आंतरिक-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में कहूंगा, बाह्य-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में कहूंगा, इसे सुनो, मन में ठीक से धारण करो। कहता हूं।

"आयुष्मान! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओं ने आयुष्मान सारिपुत्त को प्रत्युत्तर दिया। आयुष्मान सारिपुत्त ने यह कहा –

"आयुष्मानो! आंतरिक-संयोजन वाला व्यक्ति कौन होता है?

"आयुष्मानो! एक भिक्षु शीलवान होता है, प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करने वाला, आचार-गोचर (आचरण) से युक्त, अणुमात्र दोष से भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षा-पदों को ग्रहणकर उनका सम्यक पालन करने वाला।

"वह शरीर के छूटने पर, मरने के बाद किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहां से च्युत होकर आगामी होता है, फिर इस लोक में आने वाला।

"आयुष्मानो! ऐसा व्यक्ति आंतरिक-संयोजन वाला व्यक्ति कहलाता है, आगामी, फिर इस लोक में आने वाला।

"आयुष्मानो! बाह्य-संयोजन वाला व्यक्ति कौन होता है?

"आयुष्मानो! एक भिक्षु शीलवान होता है, प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करने वाला, आचार-गोचर से युक्त, अणुमात्र दोष से भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षा-पदों को ग्रहणकर उनका सम्यक्पालन करने वाला।

"वह किसी शांत चित्त-विमुक्ति को प्राप्त कर विहार करता है। वह शरीर के छूटने पर, मरने के बाद किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहां से च्युत होकर अनागामी होता है, फिर इस लोक में नहीं आने वाला।

"आयुष्मानो! ऐसा व्यक्ति बाह्य-संयोजन वाला व्यक्ति कहलाता है, अनागामी, फिर इस लोक में न आने वाला।

"और भी फिर आयुष्मानो! भिक्षु शीलवान होता है... सम्यक पालन करने वाला।

"वह कामनाओं से ही निर्वेद प्राप्त करने के लिए, विराग के लिए, निरोध के लिए मार्गारूढ़[१] होता है। वह भव से ही निर्वेद प्राप्त करने के लिए, विराग के लिए, निरोध के लिए मार्गारूढ़ होता है। वह तृष्णा का क्षय करने के लिए मार्गारूढ़ होता है। वह लोभ का क्षय करने के लिए मार्गारूढ़ होता है। वह शरीर छूटने पर, मरने के बाद किसी देव-योनि में जन्म ग्रहण करता है। वह वहां से च्युत होकर अनागामी होता है, फिर इस लोक में नहीं आने वाला।

"आयुष्मानो! ऐसा व्यक्ति बाह्य-संयोजन वाला व्यक्ति कहलाता है, अनागामी, फिर इस लोक में न आने वाला।"

अब बहुत से सम-चित्त (शांतचित्त) वाले देवता भगवान के पास आये। आकर भगवान को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर स्थित उन देवताओं ने भगवान से यह कहा –

"भंते! मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में आयुष्मान सारिपुत्त ने भिक्षुओं को आंतरिक-संयोजन वाले तथा बाह्य-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में देशना की है। परिषद प्रसन्न है। अच्छा हो यदि भंते! भगवान अनुकंपा कर सारिपुत्त के पास चलें।" भगवान ने मौन रहकर स्वीकार किया।

तब भगवान जैसे कोई बलवान पुरुष समेटी हुई बांह को पसारे अथवा पसारी हुई बांह को समेटे, उसी प्रकार जेतवन से अंतर्धान होकर मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में आयुष्मान सारिपुत्त के सामने प्रकट हुए। भगवान बिछे आसन पर विराजमान हुए। आयुष्मान सारिपुत्त भी भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये । एक ओर बैठे आयुष्मान सारिपुत्त को भगवान ने यह कहा –

---

१ पालि के **'पटिपन्नो होति'** का अनुवाद 'प्रतिपन्न होता है' किया गया है। यह सही है कि 'प्रतिपन्न' शब्द हिंदी कोश में 'मार्गारूढ़ होने' के अर्थ में नहीं मिलता, पर एडगर्टन ने 'बुद्धिष्ट हायब्रिड संस्कृत कोश' में दिखाया है कि 'प्रतिपन्न' मार्गारूढ़ होने के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अतः इसे रखा जा सकता है। हिंदी को एक नया शब्द मिलेगा।

"सारिपुत्त! यहां बहुत से सम-चित्त वाले देवता मेरे पास आये। आकर मुझे प्रणाम कर एक ओर बैठ गये।

"सारिपुत्त! एक ओर स्थित उन देवताओं ने मुझे यह कहा –

"भंते! मिगार-माता के पूर्वाराम प्रासाद में स्थित आयुष्मान सारिपुत्त ने भिक्षुओं को आंतरिक-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में तथा बाह्य-संयोजन वाले व्यक्ति के बारे में उपदेश दिया है। भंते! परिषद प्रसन्न है। भंते! अच्छा हो यदि आप अनुकंपा कर आयुष्मान सारिपुत्त के पास चलें। सारिपुत्त! वे देवता दस हों, बीस हों, तीस हों, चालीस हों, पचास हों, साठ हों वे सब सूई की नोक (गिरने) के स्थान पर खड़े हो जाते हैं और परस्पर एक दूसरे को बाधा नहीं पहुँचाते (रगड़ नहीं खाते)।

"हो सकता है सारिपुत्त! तेरे मन में ऐसा हो कि उन देवताओं ने वहां इस प्रकार चित्त का अभ्यास किया है कि वे देवता चाहे दस हों, चाहे बीस हों, चाहे तीस हों, चाहे चालीस हों... सूई की नोक के स्थान पर रह सकते हैं और परस्पर एक दूसरे को बाधा नहीं पहुँचाते। नहीं सारिपुत्त! ऐसा नहीं समझना चाहिए – यहीं[१] (शील, समाधि, प्रज्ञा के क्षेत्र में और मनुष्य लोक में) उन देवताओं ने ऐसा चित्त-अभ्यास किया है कि वे चाहे दस हों... बाधा नहीं पहुँचाते।

"इसलिए सारिपुत्त! यह सीखना चाहिए कि हम शांत इंद्रिय वाले, शांत मानस वाले होंगे। ऐसा ही सारिपुत्त, सीखना चाहिए। शांत इंद्रिय वालों के, शांत मानस वालों के ही कायिक-कर्म शांत होंगे। वाचिक, मानसिक कर्म शांत होंगे। हम अपने सब्रह्मचारियों को उपहार में शांति ही देंगे। तुम्हें सारिपुत्त! ऐसा ही सीखना चाहिए। जिन दूसरे अन्यतैर्थिक परिव्राजकों ने इस धर्म को नहीं सुना वे विनाश को प्राप्त हुए।"

---

१ भगवान बुद्ध का धर्म विश्वजनीन नियमों पर आधारित है जैसे आग कभी आग से नहीं बुझती, वैसे ही वैर कभी वैर से शांत नहीं होता। अगर हम किसी पर क्रोध करेंगे तो पहले हम ही क्रोध से जलेंगे। इसलिए जब **'इधेव'** शब्द का प्रयोग होता है तब इसका अर्थ सांप्रदायिक बौद्ध धर्म से नहीं, बल्कि वैसे धर्म से है जो विश्वजनीन है जैसे शील, समाधि और प्रज्ञा। पू. गोयन्काजी के अनुसार शील का पालन करना भला किस धर्म में नहीं सिखाया जाता? इस चपल चंचल चित्त को एकाग्र करना कौन धर्म अच्छा नहीं कहता? और प्रज्ञा को जगाना, विकसित करना, पूर्ण करना तथा इसकी अवाप्ति (प्राप्ति) तो धर्म का एक मात्र उच्चतम लक्ष्य है। जहां-जहां भगवान बुद्ध ने **'इधेव'** शब्द का प्रयोग किया है वहां यह बताने के लिए किया है कि उस शासन में अर्थात शील, समाधि तथा प्रज्ञा से ही मानवता का कल्याण संभव है, किसी तथाकथित सांप्रदायिक धर्म से नहीं।

३८. ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान महाकच्चान भद्दसारि के किनारे पर वरणा में विहार कर रहे थे।

उस समय आरामदण्ड ब्राह्मण आयुष्मान महाकच्चान के पास गया। जाकर आयुष्मान महाकच्चान के साथ बातचीत की और कुशलक्षेम पूछा। कुशलक्षेम पूछ चुकने के बाद वह ब्राह्मणएक ओर बैठ गया।

एक ओर बैठे हुए आरामदण्ड ब्राह्मण ने आयुष्मान महाकच्चान को यह कहा –

"हे कच्चान! इसका क्या हेतु है, इसका क्या कारण है कि क्षत्रिय भी क्षत्रियों के साथ विवाद करते हैं, ब्राह्मण भी ब्राह्मणों के साथ विवाद करते हैं, गृहपति भी गृहपतियों के साथ विवाद करते हैं?"

"कामभोगों के प्रति आसक्ति के कारण, कामभोगों के जाल में फँसे होने के कारण, कामभोगों के कीचड़ में धँसे होने के कारण, कामभोगों के गर्त में गड़े होने के कारण हे ब्राह्मण! क्षत्रिय भी क्षत्रियों से विवाद करते हैं, ब्राह्मण भी ब्राह्मणों से विवाद करते हैं, गृहपति भी गृहपतियों के साथ विवाद करते हैं।"

"हे कच्चान! इसका क्या हेतु है, इसका क्या कारण है कि श्रमण भी श्रमणों के साथ विवाद करते हैं?"

"दृष्टि (=मत-विशेष) के प्रति आसक्ति के कारण, दृष्टि के जाल में फँसे होने के कारण, दृष्टि के कीचड़ में धँसे होने के कारण, दृष्टि के गर्त में गड़े होने के कारण हे ब्राह्मण! श्रमण भी श्रमणों के साथ विवाद करते हैं।"

"हे कच्चान! क्या कोई इस लोक में ऐसा है जो कामभोगों की आसक्ति और बंधन आदि के तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया हो?"

"हे ब्राह्मण! लोक में ऐसा (व्यक्तित्व) है जो कामभोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया है।"

"हे कच्चान! लोक में ऐसा कौन है जो कामभोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चला गया है?"

"हे ब्राह्मण! पूर्व जनपद में श्रावस्ती नाम का नगर है। इस समय वे भगवान अर्हत सम्यक संबुद्ध वहां विहार करते हैं। हे ब्राह्मण! वे भगवान कामभोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चले गये हैं।"

ऐसा कहे जाने पर आरामदण्ड ब्राह्मण ने आसन से उठ, वस्त्र को एक कंधे पर कर, दायें घुटने को पृथ्वी पर टेक, जिस ओर भगवान थे उस ओर हाथ जोड़ तीन बार उदान वाक्य कहा –

"उन भगवान अर्हत सम्यक संबुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान अर्हत सम्यक संबुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान अर्हत सम्यक संबुद्ध को नमस्कार है। उन भगवान को जो कामभोगों की आसक्ति और बंधन आदि तथा दृष्टि की आसक्ति और बंधन आदि के उस पार चले गये हैं।

"सुंदर, हे कच्चान! बहुत सुंदर, कच्चान! जैसे कोई उल्टे को सीधा कर दे, ढँके को उघाड़ दे, मार्ग-भूले को रास्ता बता दे अथवा अंधेरे में मशाल धारण करे, जिससे आंख वाले चीजों को देख सकें। इसी प्रकार आप कच्चान ने अनेक प्रकार से धर्म को प्रकाशित किया है। मैं उन भगवान गौतम की शरण, धर्म तथा संघ की शरण जाता हूं। आज से जीवनपर्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

३९. एक समय आयुष्मान महाकच्चान मधुरा (मथुरा) में गुन्दावन में विहार करते थे। तब कन्दरायन ब्राह्मण आयुष्मान महाकच्चान के पास आया। आकर आयुष्मान महाकच्चान के साथ... एक ओर बैठे हुए कन्दरायन ब्राह्मण ने आयुष्मान महाकच्चान को यह कहा –

"हे कच्चान! मैंने सुना है कि श्रमण कच्चान बड़े, बूढ़े, ज्येष्ठ, आयु-प्राप्त ब्राह्मणों का न अभिवादन करता है, न सत्कार करता है, न उन्हें (आदरपूर्वक) आसन देता है। हे कच्चान! यदि यह ऐसा ही है कि आप कच्चान बड़े, बूढ़े, ज्येष्ठ, आयु-प्राप्त ब्राह्मणों का न अभिवादन करते हैं, न सत्कार करते हैं, न उन्हें (आदरपूर्वक) आसन देते हैं तो यह ठीक नहीं है।"

"हे ब्राह्मण! उन जानने वाले, देखने वाले अर्हत सम्यक संबुद्ध ने वृद्ध (ज्येष्ठ) तथा युवा (कनिष्ठ) की व्याख्या की है।

"हे ब्राह्मण! यदि कोई आयु से अस्सी वर्ष का हो, नब्बे वर्ष का हो अथवा सौ वर्ष का हो, किंतु वह कामभोग में रत हो, कामभोग के बीच में रहता हो, कामभोग की जलन से जलता हो, कामभोग के वितर्कों का शिकार बनता हो, कामभोग के लिए इच्छुक रहता हो तो वह थेर न कहलाकर मूर्ख ही कहलायगा।

"हे ब्राह्मण! यदि कोई छोटा भी हो, तरुण हो, काले बालों वाला हो, श्रेष्ठ यौवन से युक्त हो, अपनी प्रथम-आयु में ही हो, किंतु वह कामभोग में रत न हो, कामभोग के बीच में न रहता हो, कामभोग की जलन से न जलता हो,

कामभोग के वितर्कों का शिकार न बनता हो, कामभोग के लिए इच्छुक न रहता हो तो वह पंडित और थेर ही कहलायगा।

ऐसा कहे जाने पर कन्दरायन ने आसन से उठकर, वस्त्र को एक कंधे पर कर, छोटे भिक्षुओं के चरणों में सिर से नमस्कार किया। आप लोग पंडित हैं, सही माने में वृद्ध (स्थविर) हैं। हम लोग युवक (कनिष्ठ) हैं, सही माने में मूर्ख हैं।

"सुंदर, हे कच्चान!... हे कच्चान! आज से जीवनपर्यंत मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।"

४०. "भिक्षुओ, जिस समय चोर बलवान होते हैं, उस समय राजागण दुर्बल हो जाते हैं। उस समय भिक्षुओ, राजाओं के लिए बाहर-भीतर आना-जाना सुकर नहीं रहता तथा प्रत्यंत-जनपद की देखभाल करना भी सुकर नहीं रहता। उसी प्रकार ब्राह्मण-गृहपतियों के लिए भी उस समय बाहर आना-जाना तथा बाहर के कामों का निरीक्षण करना सुकर नहीं रहता।

"उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस समय दुराचारी भिक्षु सबल हो जाते हैं, उस समय सदाचारी भिक्षु दुर्बल हो, संघ के बीच मुँह बंद किये बैठे रहते हैं अथवा प्रत्यंत-जनपद की ओर चले जाते हैं; भिक्षुओ, यह बहुत जनों के अहित के लिए होता है, बहुत जनों के असुख के लिए होता है, बहुत जनों के अनर्थ, अहित तथा देव-मनुष्यों के दुःख के लिए होता है।

"भिक्षुओ, जिस समय राजा बलवान होते हैं, चोर दुर्बल होते हैं, उस समय भिक्षुओ, राजाओं के लिए बाहर-भीतर आना-जाना सुकर होता है तथा प्रत्यंत-जनपद की देखभाल करना भी सुकर होता है। उसी प्रकार ब्राह्मण-गृहपतियों के लिए भी उस समय बाहर आना-जाना तथा बाहर के कामों का निरीक्षण करना सुकर रहता है।

"उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस समय सदाचारी भिक्षु सबल रहते हैं, उस समय दुराचारी भिक्षु दुर्बल हो जाते हैं। उस समय दुराचारी भिक्षु दुर्बल हो संघ के बीच मुँह बंद किये बैठे रहते हैं अथवा जहां-तहां चले जाते हैं; भिक्षुओ, यह बहुत जनों के हित के लिए होता है, बहुत जनों के सुख के लिए होता है, बहुत जनों के अर्थ, हित तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिए होता है।"

४१. "भिक्षुओ, मैं दो जनों की मिथ्या-चर्या (मिथ्या आचरण) की प्रशंसा नहीं करता हूं, गृहस्थों की तथा प्रव्रजितों की। भिक्षुओ, चाहे गृहस्थ हो, चाहे प्रव्रजित हो यदि मिथ्या-प्रतिपन्न (मिथ्या मार्ग पर आरूढ़) है तो अपनी मिथ्या-चर्या के कारण वह उचित विधि, कुशल-धर्म को प्राप्त नहीं कर सकता।

"भिक्षुओ, मैं दो जनों की सम्यक-चर्या की प्रशंसा करता हूं, गृहस्थों की तथा प्रव्रजितों की। भिक्षुओ, चाहे गृहस्थ हो, चाहे प्रव्रजित हो, यदि वह सम्यक-प्रतिपन्न है तो अपनी सम्यक-चर्या के कारण वह उचित विधि, कुशल-धर्म को प्राप्त कर सकता है।"

४२. "भिक्षुओ, जो भिक्षु दुर्गृहीत[१] सूत्रों से अक्षरशः व्याख्या कर, अर्थ और धर्म (सार-भाव) का अनादर करते हैं (नहीं मानते हैं), भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत जनों का अहित करने वाले हैं, बहुत जनों के असुख के लिए हैं, बहुत जनों के अनर्थ के लिए, अहित के लिए तथा देव-मनुष्यों के दुःख के लिए हैं। भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत अपुण्यार्जन करते हैं, तथा सद्धर्म के अंतर्धान होने में सहायता करते हैं।

"भिक्षुओ, जो भिक्षु सुगृहीत सूत्रों से अक्षरशः व्याख्या कर, अर्थ और धर्म (सार-भाव) का अनुसरण करते हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत जनों का हित करनेवाले हैं, बहुत जनों के सुख के लिए हैं, बहुत जनों के अर्थ के लिए, हित के लिए तथा देव-मनुष्यों के सुख के लिए हैं, भिक्षुओ, वे भिक्षु बहुत पुण्यार्जन करते हैं तथा सद्धर्म की स्थापना करते हैं।"

* * * * *

५. परिषद वर्ग

४३. "भिक्षुओ, परिषद दो प्रकार की होती है।

"कौन-सी दो?

"उथली-परिषद तथा गंभीर-परिषद।

"भिक्षुओ, उथली परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु उद्धत होते हैं, अभिमानी होते हैं, चपल होते हैं, मुखर होते हैं, असंयतभाषी होते हैं, विस्मृत-स्मृति होते हैं, असंप्रज्ञ होते हैं, असमाहित होते हैं, भ्रांतचित्त होते हैं, असंयत-इंद्रिय होते हैं – भिक्षुओ, ऐसी परिषद उथली-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, गंभीर-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु अनुद्धत होते हैं, अभिमान-रहित होते हैं, चपल नहीं होते, मुखर नहीं होते, संयत-भाषी होते हैं, स्मृतिमान होते हैं, संप्रज्ञानी होते हैं, समाहित होते हैं, एकाग्र-चित्त होते हैं तथा संयत-इंद्रिय होते हैं – भिक्षुओ, ऐसी परिषद गंभीर-परिषद कहलाती है।

---

१ **'दुग्गहितेहीति उप्पटिपाटिया गहितेहि'** (पालि) = असंभव अर्थ ग्रहण कर।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकारकी परिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकारकी परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो कि यह गंभीर-परिषद है।"

४४. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषदहोती है।

"कौन-सी दो?

"गुटों में बँटी परिषद तथा समग्र (एकजुट) परिषद।

"भिक्षुओ, गुटों में बँटी परिषद कौन-सीहोती है? भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु परस्पर झगड़ा करतेहैं, कलहकरतेहैं, विवाद करतेहैं, एक-दूसरेको शब्दशूल से बींधते रहते हैं – भिक्षुओ, इस प्रकार की परिषद गुटों में बँटी परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, समग्र-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु मिल-जुलकर प्रसन्नतापूर्वक ,बिना विवाद करतेहुए, दूध-पानी कीतरह मिले हुए, एक दूसरे कोप्रेमभरी दृष्टि से देखते हुए विहार करतेहैं– भिक्षुओ, इस प्रकारकीपरिषद समग्र-परिषद कहलातीहै।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकारकीपरिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकारकीपरिषदों में यही श्रेष्ठ है जो कि यह समग्र-परिषद है।"

४५. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषदहोती है।

"कौन-सी दो प्रकार?

"हीन-परिषद तथा श्रेष्ठ-परिषद।

"भिक्षुओ, हीन-परिषद कैसी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में स्थविर भिक्षु अल्पेच्छ नहीं होते, शिथिल होते हैं, पतनोन्मुख होते हैं, एकांत-सेवनके प्रति उदासीन होते हैं, अप्राप्त कीप्राप्ति के लिए, जो हस्तगत नहीं है उसे हस्तगत करनेके लिए, जिसकासाक्षात नहीं हुआ है उसकासाक्षात करनेके लिए प्रयत्नशील नहीं होते; उनके अनुयायी भी उनका अनुकरण करते हैं, वे भी अल्पेच्छ नहीं होते, शिथिल होते हैं, पतनोन्मुख होते हैं, एकांत-सेवनके प्रति उदासीन होते हैं, अप्राप्त कीप्राप्ति के लिए, जो हस्तगत नहीं है उसे हस्तगत करनेके लिए, जिसकासाक्षात नहीं हुआ है उसकासाक्षात करनेके लिए, प्रयत्नशील नहीं होते। भिक्षुओ, ऐसी परिषद हीन-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, श्रेष्ठ-परिषद कैसी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में स्थविर भिक्षु अल्पेच्छ होते हैं, शिथिल नहीं होते, पतन कीओर अग्रसर नहीं होते, एकांत-सेवन के प्रति उदासीन नहीं

होते, अप्राप्त की प्राप्ति के लिए, जो हस्तगत नहीं है उसे हस्तगत करने के लिए, जिसका साक्षात नहीं हुआ है उसका साक्षात करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं, उनके अनुयायी भी उनका अनुकरण करते हैं, वे भी अल्पेच्छ होते हैं, शिथिल नहीं होते, पतन की ओर अग्रसर नहीं होते, एकांत-सेवन के प्रति उदासीन नहीं होते, अप्राप्त की प्राप्ति के लिए, जो हस्तगत नहीं हुआ है उसे हस्तगत करने के लिए, जिसका साक्षात नहीं हुआ है उसका साक्षात करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकार की परिषद श्रेष्ठ-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दोनों प्रकार की परिषदों में यही उत्तम है, जो यह श्रेष्ठ-परिषद है।"

४६. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौन-सी दो?

"अनार्य-परिषद तथा आर्य-परिषद।

"भिक्षुओ, अनार्य-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु 'यह दुःख है' इसे यथार्थ रूप से नहीं जानते, 'यह दुःख-समुदय है' इसे यथार्थ रूप से नहीं जानते, 'यह दुःख-निरोध है' इसे यथार्थ रूप से नहीं जानते, 'यह दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपदा (मार्ग) है' इसे यथार्थ रूप से नहीं जानते – भिक्षुओ, ऐसी परिषद अनार्य-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, आर्य-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु 'यह दुःख है' इसे यथार्थ रूप से जानते हैं, 'यह दुःख-समुदय है' इसे यथार्थ रूप से जानते हैं, 'यह दुःख-निरोध है' इसे यथार्थ रूप से जानते हैं, 'यह दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपदा है' इसे यथार्थ रूप से जानते हैं – ऐसी परिषद आर्य-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है, जो यह आर्य-परिषद है।"

४७. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौन-सी दो?

"निःसार-परिषद तथा सारवान-परिषद।

"भिक्षुओ, निःसार-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु राग के कारण कुमार्ग पर चलते हैं, द्वेष के कारण कुमार्ग पर चलते हैं, मोह के कारण कुमार्ग पर चलते हैं, भय के कारण कुमार्ग पर चलते हैं –ऐसी परिषद, भिक्षुओ, निःसार-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, सारवान-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु राग के कारण कुमार्ग पर नहीं चलते हैं, द्वेष के कारण कुमार्ग पर नहीं चलते हैं, मोह के कारण कुमार्ग पर नहीं चलते हैं, भय के कारण कुमार्ग पर नहीं चलते हैं – ऐसी परिषद, भिक्षुओ, सारवान-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है, जो यह सारवान-परिषद है।"

४८. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौन-सी दो?

"दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा अविनीत तथा प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत।

"भिक्षुओ, दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा अविनीत परिषद कैसी होती है? भिक्षुओ, जिस परिषद में जो तथागत द्वारा भाषित गंभीर, गंभीर अर्थ वाले, लोकोत्तर, तथा शून्यता-युक्त सूक्त हैं उनके कहे जाते समय न उन्हें सुनते हैं, न कान देते हैं, न समझने के लिए उस ओर चित्त एकाग्र करते हैं, न उन धर्मों को सीखने योग्य तथा प्रवीणता प्राप्त करने योग्य मानते हैं; किंतु जो कविकृत काव्य सूक्त हैं, जिनके अक्षरों तथा व्यंजनों में विचित्रता है, जो (धर्म से) बाह्य हैं, जो (अन्य-) श्रावक भाषित हैं, उनके कहे जाते समय उन्हें सुनते हैं, उधर कान देते हैं, समझने के लिए उस ओर चित्त एकाग्र करते हैं, उन धर्मों को सीखने योग्य तथा प्रवीणता प्राप्त करने योग्य मानते हैं। वे उन धर्मों को धारण कर आपस में, यह कैसे है, इसका क्या अर्थ है इस तरह का प्रश्न करके उन पर परिचर्चा नहीं करते, वे उलझे को सुलझाते नहीं हैं, वे अस्पष्ट को स्पष्ट नहीं करते हैं, अनेक प्रकार के संदिग्ध स्थलों से शंका-संदेह दूर नहीं करते। भिक्षुओ, ऐसी परिषद दुर्विनीत और प्रश्नोत्तर द्वारा अविनीत परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद कैसी होती है? भिक्षुओ, जिस परिषद में जो कविकृत काव्य-सूक्त हैं, जिनके अक्षरों तथा व्यंजनों में विचित्रता है, जो बाह्य हैं, जो (अन्य-) श्रावक भाषित हैं उनके कहे जाते समय न उन्हें सुनते हैं, न कान देते हैं, न समझने के लिए उस ओर चित्त एकाग्र करते हैं, न उन धर्मों को सीखने योग्य तथा प्रवीणता प्राप्त करने योग्य मानते हैं, किंतु जो तथागत द्वारा भाषित गंभीर, गंभीर अर्थ वाले, लोकोत्तर तथा शून्यता-युक्त सूक्त हैं उनके कहे जाते समय उन्हें सुनते हैं, उधर कान देते हैं, समझने के लिए उधर चित्त एकाग्र करते हैं, उन धर्मों को सीखने तथा

प्रवीणता प्राप्त करने योग्य मानते हैं। वे उन धर्मों को धारण कर आपस में, यह कैसे है, इसका क्या अर्थ है इस तरह का प्रश्न करके उन पर परिचर्चा करते हैं, वे उलझे को सुलझाते हैं, वे अस्पष्ट को स्पष्ट करते हैं, वे अनेक प्रकार के संदिग्ध-स्थलों से शंका-संदेह दूर कर देते हैं। भिक्षुओ, ऐसी परिषद प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह प्रश्नोत्तर द्वारा विनीत और सुविनीत परिषद कहलाती है।"

४९. "भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौन-सी दो?

"भौतिक चीजों को महत्त्व देने वाली किंतु सद्धर्म को महत्त्व न देने वाली; सद्धर्म को महत्त्व देने वाली किंतु भौतिक चीजों को महत्त्व न देने वाली।

"भिक्षुओ, भौतिक चीजों को महत्त्व देने वाली किंतु सद्धर्म को महत्त्व न देने वाली परिषद कैसी होती है? भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु श्वेत-वस्त्रधारी गृहस्थों के सम्मुख परस्पर यह कहते हैं कि अमुक भिक्षु दोनों भागों से विमुक्त है (जो आठ प्रकार के विमोक्षों को नाम-काय से साक्षात्कार कर विहार करता है और प्रज्ञा से आस्रवों को पूर्ण रूप से नष्ट करता है), अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है (आठ विमोक्षों को काय से साक्षात्कार नहीं करता है लेकिन प्रज्ञा से आस्रवों को क्षीण करता है), अमुक काय-साक्षी है (आठ विमोक्षों का काय से साक्षात्कार करता है और प्रज्ञा से कुछ आस्रवों को पूरी तरह नष्ट करता है), अमुक दृष्टि-प्राप्त है (अमुक दृष्टियों के अंत तक पहुँच गया है, जिसे चारों आर्यसत्यों का सम्यक ज्ञान है और जिसने उनका अभ्यास और कुछ आस्रवों का प्रहाण किया है), अमुक श्रद्धा-विमुक्त है (यह भी दृष्टि-प्राप्त की तरह ही है पर पूर्ण रूप से नहीं: कुछ आस्रवों का यह पूर्ण प्रहाण करते हैं लेकिन दृष्टि-प्राप्त की तरह नहीं), अमुक धर्मानुसारी है (स्रोतापत्ति फल के साक्षात्कार के लिए जो मार्गारूढ़ होता है, जिसकी प्रज्ञा बलवती है, जो आर्य मार्ग की भावना करता है वही धर्मानुसारी है), अमुक श्रद्धानुसारी है (स्रोतापत्ति फल के साक्षात्कार के लिए मार्गारूढ़ है लेकिन प्रज्ञा की जगह श्रद्धा बलवती होती है।), अमुक शीलवान, सदाचारी है, तथा अमुक दुःशील, दुराचारी है... कहकर प्रशंसा करते हैं, उससे उन्हें कुछ लाभ होता है, उस लाभ को प्राप्त कर, उस लाभ में ग्रथित, उससे मूर्च्छित हुए, उसमें आसक्त हुए, उसके दुष्परिणामों की ओर से लापरवाह, उससे बाहर निकलने की प्रज्ञा से विहीन रहकर उन वस्तुओं का परिभोग करते हैं। भिक्षुओ, भौतिक-चीजों को महत्त्व देने वाली किंतु सद्धर्म को महत्त्व न देने वाली परिषद ऐसी होती है।

"भिक्षुओ, सद्धर्म को महत्त्व देने वाली किंतु भौतिक-चीजों को महत्त्व न देने वाली परिषद कैसी होती है? भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु श्वेत-वस्त्रधारी गृहस्थों के सम्मुख परस्पर यह नहीं कहते कि अमुक भिक्षु दोनों भागों से विमुक्त है, अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है, अमुक काय-साक्षी है, अमुक दृष्टियों के अंत तक पहुँच गया है, अमुक श्रद्धा-विमुक्त है, अमुक श्रद्धानुसारी है, अमुक धर्मानुसारी है, अमुक शीलवान सदाचारी है तथा अमुक दुःशील दुराचारी है... कहकर प्रशंसा नहीं करते, उससे उन्हें लाभों की प्राप्ति होती है, उन लाभों को प्राप्त कर, उन लाभों में ग्रथित न हुए, उन लाभों से मूर्च्छित न हुए, उन लाभों में न आसक्त हुए, उनके दुष्परिणामों के प्रति सजग, उससे बाहर निकलने की प्रज्ञा से युक्त रहकर उन वस्तुओं का परिभोग करते हैं। भिक्षुओ, सद्धर्म को महत्त्व देने वाली किंतु भौतिक-चीजों को महत्त्व न देने वाली परिषद ऐसी होती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह सद्धर्म को महत्त्व देने वाली किंतु भौतिक-चीजों को महत्त्व न देने वाली है।"

५०. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषद होती है।

"कौन-सी दो?

"विषम तथा सम।

"भिक्षुओ, विषम-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में अधार्मिक-कार्य होते हैं, धार्मिक-कार्य नहीं होते; अविनय (विनयविरुद्ध)-कर्म होते हैं, विनय (विनयानुसार)-कर्म नहीं होते; अधार्मिक-कार्य प्रकाशित होते हैं, धार्मिक-कार्य प्रकाशित नहीं होते, अविनय-कर्म प्रकाशित होते हैं, विनय-कर्म प्रकाशित नहीं होते – भिक्षुओ, ऐसी परिषद विषम-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, सम-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में धार्मिक-कार्य होते हैं, अधार्मिक-कार्य नहीं होते; विनय-कर्म होते हैं, अविनय-कर्म नहीं होते; धार्मिक-कार्य प्रकाशित होते हैं, अधार्मिक-कार्य प्रकाशित नहीं होते, विनय-कर्म प्रकाशित होते हैं, अविनय-कर्म प्रकाशित नहीं होते – भिक्षुओ, ऐसी परिषद सम-परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह सम-परिषद है।"

५१. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषदहोती है।

"कौन-सी दो?

"अधार्मिक-परिषद तथा धार्मिक-परिषद... (अनुच्छेद ५० की तरह)... भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। भिक्षुओ, इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह धार्मिक-परिषद है।"

५२. "भिक्षुओ, दो प्रकार की परिषदहोती है।

"कौन-सी दो?

"अधर्मवादी-परिषद तथा धर्मवादी परिषद।

"भिक्षुओ, अधर्मवादी-परिषद कौन-सी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु धार्मिक अथवा अधार्मिक विवाद उपस्थित करते हैं। वे उस विवाद को लेकर एक दूसरे को सूचित नहीं करते, न छान-बीन या जांच-पड़ताल के लिए एकत्र होते हैं, और न मेल-मिलाप करते हैं और न मेल-मिलाप करवाने के लिए एकत्र होते हैं। वे सूचना देने को अस्वीकार कर, मेल-मिलाप कर झगड़ा समाप्त कराने को अस्वीकार कर, पक्ष-विशेष को ग्रहण करने वाले, उसी विवाद को दृढ़ता से ग्रहण कर, पकड़ कर मान लेते हैं कि यही ठीक है और सब गलत है –भिक्षुओ, ऐसी परिषद अधर्मवादी परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, धर्मवादी परिषद कैसी होती है?

"भिक्षुओ, जिस परिषद में भिक्षु धार्मिक अथवा अधार्मिक विवाद उपस्थित करते हैं, वे उस विवाद को लेकर एक दूसरे को सूचित करते हैं, उस पर छान-बीन करने के लिए एकत्र होते हैं, मेल-मिलाप करते हैं और मेल-मिलाप करवाने के लिए एकत्र होते हैं, वे सूचना देने को स्वीकार कर, मेल-मिलाप कर झगड़ा समाप्त कराने को स्वीकार कर, पक्ष-विशेष को न ग्रहण करने वाले, उसी विवाद को दृढ़ता से ग्रहण कर, पकड़ कर नहीं मान लेते कि यही ठीक है और सब गलत है – भिक्षुओ, ऐसी परिषद धर्मवादी परिषद कहलाती है।

"भिक्षुओ, ये दो प्रकार की परिषदें हैं। इन दो प्रकार की परिषदों में यही श्रेष्ठ है जो यह धर्मवादी परिषद है।"

* * * * *